अभिलेख अशोक के काल का माना जाता है। सम्राट अशोक के अभिलेख लगभग सम्पूर्ण भारत में पाए जाते हैं। इन्हें उत्तर में हिमालय से लेकर दक्षिण में कर्नाटक तक तथा पश्चिम में गिरनार से लेकर दक्षिण पूर्व में धौली और जौगढ़ तक चिह्नांकित किया गया है। इन अभिलेखों में लेखन कला की विकास-यात्रा के विभिन्न आयाम स्पष्ट रूप से दर्शनीय हैं। भिन्न-भिन्न अक्षरों के अनेक स्वरूप, स्थानीय व घसीट रूप आदि यहाँ दिखाई देते हैं। जिनके आधार पर ब्यूलर का विचार है कि चूँकि लेखन शैली या कला इतने अधिक समय से प्रचलन में थी इसलिए व्यक्तिगत रुचि के अनुसार उसके अनेक रूप व शैलियों का विकास हो चुका था। ''....ई०पू० तीसरी शताब्दी में अनेक शैलियों का प्रयोग होता था, इनमें से कुछ तो अंशत: पुरानी थीं और कुछ अंशत: अधिक विकसित। लेखक अपनी मर्जी से या हुक्म पाकर जब पत्थरों वाले रूप लिखते थे तो असावधानीवश उनमें घसीट अक्षर भी लिख जाते थे, क्योंकि ऐसे अक्षरों का उन्हें अभ्यास होता था।''

अशोक काल से पूर्व लेखन की उपस्थिति के प्रमाण विभिन्न मुद्राओं से प्राप्त होते हैं। एरण से प्राप्त सिक्के पर दाएँ से बाईं ओर लेख अंकित है। ब्यूलर का विचार है कि यह उस काल का सिक्का है जब ब्राह्मी दाएँ से बाएँ और बाएँ से दाएँ-दोनों ओर से लिखी जाती थी। कनिंघम ने इसे मौर्यकाल से पूर्ववर्ती माना है। वे लगभग चौथी शताब्दी ई०पू० के मध्य इसकी तिथि स्वीकार करते हैं। पटना (पाटलिपुत्र) से प्राप्त मुहरों को भी मौर्यों से पूर्वकाल का माना जाता है। भट्टिप्रोलु की धातु मंजूषाओं के द्राविड़ी लेख के विषय में ब्यूलर का मत है, कि ''द्रविड़ी लिपि अपने मूलवंश से एरण के सिक्के के बहुत पहले, अधिक से अधिक ई०पू० पाँचवीं शताब्दी में अलग हो चुकी थी।'' तक्षशिला की शाहडेरी से प्राप्त अधिकांश सिक्कों पर ब्राह्मी में लेख दिखायी देते हैं, यद्यपि कुछ पर खरोष्ठी लिपि में भी लेख हैं। कनिंघम इन सिक्कों को चौथी शताब्दी ई०पू० का मानते हैं। सिक्कों के अध्ययन से ही ज्ञात होता है कि खरोष्ठी और ब्राह्मी तीसरी शताब्दी ई०पू० में एकसाथ प्रचलन में थीं। रैप्सन द्वारा उल्लिखित ईरानी सिग्लाई सिक्कों पर ब्राह्मी और खरोष्ठी दोनों लिपियों में लेख अंकित हैं। इन सिक्कों की तिथि ३३१ ई०पू० से भी पहले निर्धारित की जाती है। महास्थान (पूर्वी बंगाल में बोगरा जिला) और सोहगौरा (उत्तर-प्रदेश में गोरखपुर जिला) से प्राप्त ताम्रपट्ट लेख, जिनमें बौद्ध भिक्षुओं को दान व अकाल में अन्नादि की व्यवस्था का वर्णन है, पूर्व मौर्यकालीन हैं। उत्तर प्रदेश में ही पिपरहवा से प्राप्त बुद्ध का अस्थि-कलश लेख ४८३ ई०पू० का है जब बुद्ध को निर्वाण प्राप्त हुआ था। राजस्थान प्रान्त के बडली (अजमेर जिला) से प्राप्त अभिलेख की तिथि गणना 'वीराय भगवते चतुसती वसे' (भगवान महावीर को उनके ८४वें वर्ष में समर्पित) लेख के आधार पर ४४३ ई०पू० निश्चित की जाती है।

Scanned with CamScanner

उपरोक्त तर्कों के आलोक में यह स्पष्ट होता है कि भारतीयों को लेखन कला का ज्ञान काफी पहले से था न कि छठी शताब्दी ई०पू० से, जैसा कि विदेशी विद्वानों का विचार है। पं० ओझा का विचार है कि वेद जैसे विस्तृत कलेवर वाले ग्रन्थों के अक्षरों व छन्दों की गणना व व्याख्या उनके लिखित स्वरूप की अनुपस्थिति में बिल्कुल ही असंभव हैं। अत: निश्चिन्त रूप से वेदों की लिपिबद्ध प्रति उपलब्ध रही होगी। गोल्डस्टकर भी इस तर्क से सहमत हैं। यह संभव है कि लेखन के साधन के रूप में प्रयुक्त ताड़पत्र, भूर्जपत्र (भोजपत्र), वृक्ष की छाल आदि अपनी भंगुर प्रवृत्ति के कारण समय के साथ नष्ट हो गए और इसीलिए हमें उस काल के लिखित साक्ष्य नहीं उपलब्ध हो पाते। किन्तु यदि सिन्धु घाटी की सभ्यता से प्राप्त साक्ष्यों का आकलन किया जाय तो यह तिथि बहुत पीछे लगभग चौथी सहस्राब्दी ई०पू० तक जा सकती है। यहाँ से प्राप्त मृद्भाण्डों, मुहरों आदि पर लेखन-कला के स्पष्ट प्रमाण दिखाई देते हैं। अभी हाल ही में उत्खनित धौलावीरा (गुजरात प्रान्त) नामक स्थल से एक विशाल साइन बोर्ड के अवशेष प्राप्त हुए हैं, जिसका प्रत्येक अक्षर लगभग १$^{१}/_{२}$ फीट बड़ा है। जो लेखन कला के सामान्य जीवन में विविध प्रयोग की ओर संकेत है और हड़प्पा सभ्यता में लेखन-कला का ज्ञान सुनिश्चित करता है। यद्यपि यह भी अत्यन्त दुर्भाग्यपूर्ण है कि हम आज भी इन अक्षरों और लिपि को पढ़ पाने में समर्थ नहीं हो पाए हैं।

Scanned with CamScanner